सर्वहारा दृष्टिकोण

सोशलिस्ट यूनिटी सेन्टर आफ इंडिया का मुख पत्र-(पाक्षिक)

मुख्य सम्पादक : प्रीतीश चन्दा

वर्ष 1 अंक 9 22 फरवरी 1986 मूल्य 50 पैसे

बढ़ी हुई कीमतों और बस भाड़े के विरोध में

एस०यू०सी०आई० द्वारा दिल्ली में जनप्रतिरोध-अनेक कार्यकर्ता गिरफ्तार

राजीव सरकार ने जिस प्रकार बजट से पहले गेहूं, चावल मिट्टी के तेल, रसोई गैस व पैट्रोल की कीमतों में अप्रत्याशित वृद्धि की है उससे तमाम देश की जनता के सामने, इस सरकार का जन विरोधी व अमीरपरस्त चेहरा एक बार फिर उजागर हो गया है। दिल्ली परिवहन निगम के बस भाड़े में हुई बेतहाशा वृद्धि ने राजधानी दिल्ली की जनता पर जबर्दस्त चोट की है। इस प्रकार एकाधिकारी पूंजीपतियों को करों में दी गई जबरदस्त छूट और सब्सिडि (Subsidy) से उत्पन्न घाटे की खाई को पाटने का बोझ तथा डी. टी. सी. में व्याप्त भ्रष्टाचार और कुप्रबन्ध के कारण होने वाले घाटे को पूरा करने की जिम्मेदारी आम गरीब जनता के कंधों पर डाल दी गई है। इस जबर्दस्त मार ने लोगों को नींद से जगा दिया है। एक अभूतपूर्व जनाक्रोश लोगों में दिखाई दे रहा है।

शोषित-पीड़ित जनता की विश्वासपात्र व सच्ची हमदर्द, भारत की एकमात्र क्रांतिकारी पार्टी एस. यू. सी. आई. ने सुरसा सी बढ़ी हुई महंगाई और बस भाड़े के विरोध में जनता को संगठित करना शुरू कर दिया। 8 फरवरी से बढ़े हुए बस भाड़े लागू होने से, एस. यू. सी. आई. की दिल्ली राज्य संगठन कमेटी के सदस्य कामरेड के. सिन्हा के नेतृत्व में प्रातः दस बजे पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन के सामने एक नुक्कड़ सभा के माध्यम से आन्दोलन की शुरूआत हुई। हजारों लोगों ने कामरेड आर. के. शर्मा के ओजस्वी वक्तव्य को सुना। यहां से जुलूस की शक्ल में सैकड़ों लोग नारे लगाते हुए लाल किले की ओर बढ़े। हाथ में मांग-पट्टिकाएं और बैनर लिए, उत्साहपूर्वक बढ़ते हुए प्रदर्शनकारियों को लोगों ने प्रशंसा पूर्ण नजरों से देखा। लाल किला बस स्टैंड पर जुलूस फिर जनसभा में बदल गया। कामरेड आर. के. शर्मा और कामरेड अशोक कुमार के भाषणों को लोगों ने ध्यानपूर्वक सुना। उनकी आंखों में आशा व उत्साह की चमक थी। कामरेड के. सिन्हा ने आगे बढ़कर जब बस को रुकने का इशारा किया तो सभी कामरेड व आम लोग सड़क के बीचों-बीच खड़े हो गए। ट्रैफिक जाम हो गया। यात्रियों ने भी उतर कर नारे दिए। पुलिस ने कई बार प्रदर्शनकारियों को सड़क से हटाने का प्रयास किया। इसका कोई असर भी नहीं हुआ। लगभग डेढ़ घंटे तक यातायात ठप्प रहा।

तत्पश्चात प्रदर्शनकारी आई. टी. ओ. की ओर बढ़ चले। जुलूस में महिलाएं भी शामिल थी। आई. टी. ओ. पर भी जन-सभा का आयोजन किया गया व बसें रोकी गईं।

9 फरवरी को ओखला औद्योगिक क्षेत्र में यू.टी.यू.सी. (ले. स.) से सम्बद्ध यूनियनों के सैकड़ों श्रमिकों ने तेज बारिश व सर्दी के बावजूद मूल्य वृद्धि व बस भाड़े के विरोध में एक शानदार जुलूस निकाला। उल्लेखनीय है कि दिल्ली की लघु औद्योगिक इकाइयों में काम करने वाले अधिकांश मजदूर 300-350 रु. प्रति माह वेतन के रूप में पाते हैं। उन्हें सरकार द्वारा घोषित न्यूनतम वेतन भी नहीं मिलता। इस पर उन्हें दूर दराज के क्षेत्रों से यहां दो-दो, तीन-तीन बसें बदल कर आना पड़ता है। दो बसें बदलने का ही अर्थ है कि आने-जाने पर 4 रु. से 6 रु. तक बस भाड़े पर ही खर्च करना। इन मजदूरों ने अपने आक्रोश को प्रदर्शित करने के लिए कई स्थानों पर सभाएं आयोजित कीं।

ऐतिहासिक दिल्ली बन्द

बजट पूर्व की गई मूल्य वृद्धि और बस भाड़ा वृद्धि के खिलाफ एस. यू. सी. आई. सहित सभी महत्वपूर्ण विपक्षी पार्टियों ने 10 फरवरी को दिल्ली बन्द का आह्वान किया। प्रशासन ने भारी संख्या में पुलिस व सी. आर. पी. बल के दस्तों को दिल्ली शहर की सड़कों पर उतार दिया। उस दिन दिल दहलाने वाली ठंड के साथ-साथ प्रातःकाल से ही तेज बरसात हो रही थी। प्रशासन ने अपनी ताकत के बल पर डी.टी.सी. की बसें चलाईं, लेकिन वे सारा दिन पूरी तरह खाली दौड़ती रहीं। बन्द के समर्थन में व्यापक जनमत संचालित हो चुका था।

एस.यू.सी.आई. कार्यकर्ताओं ने भी नगर में एक जुलूस निकाला। जुलूस की अगुवाई का. आर. के. शर्मा कर रहे थे। इन्द्र लोक बस स्टैंड पर जब जुलूस पहुंचा तो पुलिस के एक दस्ते ने जुलूस को तितर-बितर हो जाने का आदेश दिया। इस पर प्रदर्शनकारी पहले से भी तेजी के साथ नारे लगाने लगे। बौखलाहट में पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर निर्ममतापूर्वक लाठी चार्ज किया। का. आर. के. शर्मा, का. अशोक कुमार, का. इन्द्रजीत, का. सुरेश, का. दर्शन सिंह व का. प्रदीप सहित अनेक कामरेडों को हिरासत में ले लिया गया। उनकी गिरफ्तारी से जनता में भारी रोष उत्पन्न हुआ। दिल्ली में अन्य स्थानों पर भी पार्टी के अनेक कार्यकर्ता बन्द का समर्थन करते हुए गिरफ्तार किए गये।

राजनैतिक पर्यवेक्षकों ने इसे सफलतम बन्द माना और कहा कि सरकारी नीतियों के प्रति दिल्ली की जनता में इस बार सर्वाधिक व्यापक रोष देखा गया।

एस. यू. सी. आई. की दिल्ली राज्य संगठन कमेटी इस आंदोलन को और भी ऊंचे स्तर में ले जाने को प्रयत्नशील है।

दिल्ली में 8 फरवरी को बढ़े बस-भाड़े के विरोध में एस.यू.सी.आई. कार्यकर्ता प्रदर्शन करते हुए।

20 फरवरी को जनप्रदर्शनों में बढ़-चढ़ कर भाग लें—जनता से एस०यू०सी०आई० की अपील

नई दिल्ली 14 फरवरी। सरकार द्वारा बजट पूर्व की गई मूल्य-वृद्धि और बस-भाड़ा वृद्धि के विरोध में आगामी 20 फरवरी को देशव्यापी स्तर पर जनप्रदर्शन किये जाएंगे। यह फैसला आज मुख्य विपक्षी पार्टियों की एक बैठक में लिया गया। बैठक में उपस्थित एस. यू. सी. आई. की केन्द्रीय समिति के सदस्य कामरेड प्रीतीश चन्दा ने लोगों से अपील की है कि वे इन जनप्रदर्शनों में बढ़-चढ़कर भाग लें तथा अपना विरोध जाहिर करें।

कामरेड चन्दा के अतिरिक्त जनता पार्टी, मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, भारतीय जनता पार्टी, कांग्रेस (एस०), कांग्रेस (जे०), लोक दल, फारवर्ड ब्लाक, समेत अन्य विपक्षी नेताओं ने भी बैठक में भाग लिया।

मूल्य वृद्धि के खिलाफ 26 फरवरी को विपक्षी दलों द्वारा आयोजित भारत बंद को सफल बनाएं

बजट-पूर्व मंहगाई का उपहार

बजट से मात्र एक मास पहले राजीव गांधी की केन्द्रीय सरकार ने मिट्टी का तेल, रसोई गैस, डबल रोटी, डीजल व पेट्रोल जैसी उपभोक्ता वस्तुओं के मूल्य में भारी वृद्धि करके अपने इरादे साफ कर दिए हैं। कोयले के दाम पहले से ही बढ़ाए जा चुके हैं। उधर सरकारी अधिकार में चलने वाली दिल्ली परिवहन निगम ने भी बस-भाड़ों में अभूतपूर्व वृद्धि कर दी है। इस प्रकार आम आदमी का जीवन जो पहले से ही दूभर हो रहा था, अब और भी कष्ट-पूर्ण व असहनीय हो गया है। इस वर्ष का सालाना बजट अभी आना शेष है। सरकार की प्राथमिकताओं को देखते हुए निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि इस बजट के माध्यम से देश की आम जनता पर एक और भारी चोट पड़ने वाली है।

बजट से पहले मूल्य वृद्धि करना अब एक सरकारी प्रथा बनती जा रही। ऐसे समय में पेट्रोल के दाम बढ़ाना, जब अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में इसके दाम गिर रहे हों, और भी विचित्र लगता है। वित्त मंत्री का तर्क है कि

सम्पादकीय

वे पेट्रोल की बढ़ती खपत पर रोक लगाना चाहते हैं। यदि देश में माल गाड़ियों की सुविधाएं अपर्याप्त होंगी तो माल-ढुलाई का बोझ पेट्रोल और डीजल पर पड़ेगा ही। कीमतें बढ़ाने से इस भार को कम नहीं किया जा सकता, उल्टे इसका प्रभाव मूल्य वृद्धि को और भी बढ़ा देगा। तो क्या मिट्टी के तेल, जो गरीब आदमी के घर में रोशनी करता है और उसका ईंधन भी है, डबलरोटी और रसोई गैस के दामों में भी खपत कम करने के लिये वृद्धि की गई है? बात इतनी सरल नहीं है। सरकार इस मूल्य वृद्धि द्वारा वास्तव में अपने पिछले वर्ष के घाटे की पूर्ति करना चाहती है। देश की पूंजीवादी अर्थव्यवस्था विश्व पूंजीवाद के गहन संकट की छाया में चल रही है। व्यापक बेरोजगारी और मंहगाई के कारण आम लोगों की क्रय शक्ति लगभग पूरी तरह नष्ट हो चुकी है, जिसके परिणामस्वरूप घरेलू बाजार अति संकुचित हो गया है। ऐसी स्थिती में अर्थव्यवस्था को चलाए रखने के लिए सेना को सबसे बड़े उपभोक्ता के रूप में पेश करके अर्थव्यवस्था का सैन्यीकरण करने और एकाधिकारी पूंजीपतियों को अरबों रु० की सहायता व अनुदान तथा अन्य प्रकार की टैक्स-रियायतें देने के अतिरिक्त सरकार को कोई अन्य विकल्प नजर नहीं आता। पूंजीवाद का अनिवार्य नियम यही है। अतः एक ओर तो जनता के खून पसीने की कमाई पर डाका डालकर सरकार एकाधिकारी पूंजीपतियों के अति-लाभ (Super Profit) को सुरक्षित रखने की चेष्टा कर रही है, वहीं दूसरी ओर इस प्रकार उत्पन्न हुई बजट के घाटे की खाई को पाटने के लिये मूल्य वृद्धि द्वारा आम जनता के खून की आखिरी बूंद तक निचोड़ लेना चाहती है।

डी. टी. सी. के बस-भाड़े में हुई भारी वृद्धि के कारण राजधानी का आम नागरिक पूरी तरह भन्ना गया है। जो मजदूर पहले 1-1.50 रु० में अपने काम के स्थान पर पहुंच जाता था, अब उसे इन बढ़ी हुई दरों के हिसाब से वहां आने-जाने पर ही 4-6रु० तक खर्च करने पड़ेंगे। यह भी एक तथ्य है कि डी. टी. सी. की बसों में आम श्रमिक जनता ही सफर करती है। अधिकांश मजदूर 300-350 रु० मासिक वेतन पर काम करते हैं, उन्हें सरकार द्वारा घोषित न्यूनतम वेतन तक नहीं मिलता। ऐसे में उनकी दुर्दशा की कल्पना की जा सकती है। भाड़ा-वृद्धि के लिये भी नुकसान घाटे की पूर्ति का ही दिया गया है। यदि डी. टी. सी. में घाटा होता है उसके लिए मैनेजमेन्ट में व्याप्त गहन भ्रष्टाचार और कुप्रबंध ही जिम्मेदार है। फिर आम जनता को इसकी सजा क्यों दी जाए?

वर्तमान मूल्य-वृद्धि और बस-भाड़ा वृद्धि के खिलाफ लोगों में व्यापक असंतोष उत्पन्न हुआ है। इसी संदर्भ में एस. यू. सी. आई. सहित दिल्ली की सभी विपक्षी पार्टियों ने 10 फरवरी को दिल्ली बंद का आह्वान किया था। इस बंद को ऐतिहासिक जनसमर्थन मिला और दिल्ली 10 फरवरी को पूरी तरह बंद रही। लेकिन यह समझना कि एक दिन बंद करने से समस्या का समाधान हो जाएगा, भयंकर भूल होगी। लोगों को समझना होगा कि देश में सभी समस्याओं की जड़ पूंजीवादी व्यवस्था है। जब तक यह व्यवस्था रहेगी किसी भी समस्या का समाधान नहीं हो सकता। इन समस्याओं का समाधान तभी संभव है जब इस शोषण-मूलक पूंजीवादी व्यवस्था को उखाड़ फेंक कर देश में समाजवाद की स्थापना की जाए। लेकिन जनता के सशक्त एकजुट जनवादी जनान्दोलन द्वारा सरकार पर दबाव डालकर कुछ-न-कुछ राहत जरूर हासिल की जा सकती है। देशव्यापी जनवादी जनान्दोलन के निर्माण की इसी प्रक्रिया में एक दिन देश के लोगों को उनकी समस्याओं का अंतिम समाधान प्राप्त होगा। अतः लोगों को चाहिए कि वे सरकार की जनविरोधी नीतियों का विरोध करने के लिये देशव्यापी जुझारू जनवादी जनान्दोलन के निर्माण के कार्य में अविलंब जुट जाएं तथा आगामी 20 फरवरी को होने वाले जनप्रदर्शनों में बढ़-चढ़ कर भाग लें।

नागपुर में तालाबंदी, छंटनी, ले-ऑफ के खिलाफ जनप्रदर्शन

नागपुर (महाराष्ट्र), 15 जनवरी। एस०यू०सी०आई० व यू०टी०यू०सी० (लै० स०) की महाराष्ट्र शाखा के नेतृत्व में सैकड़ों श्रमिकों व आम जनता ने आज नागपुर विधानसभा के सामने तालाबंदी, छंटनी, ले-ऑफ, कारखाना बंदी व सरकार की जनविरोधी नीतियों के खिलाफ जोरदार प्रदर्शन किया। मंहगाई व सरकार की श्रमिक-विरोधी नीतियों के कारण आज देश में लोगों का जीवन दूभर हो गया है। अब तो यह लगने लगा है मानो आम आदमी के जीने के अधिकार तक पर प्रश्न चिह्न लग गया है। जन-असंतोष बढ़ता ही जा रहा है। ऐसी स्थिति में एस०यू०सी०आई० की महाराष्ट्र राज्य शाखा ने पहलकदमी करते हुए, इस क्षेत्र की श्रमजीवी जनता में एक नई आशा का संचार किया है।

प्रदर्शनकारी स्थानीय पटवर्धन स्टेडियम से झांसी रानी चौक होते हुए विधानसभा की ओर बढ़े। महाराष्ट्र इलेक्ट्रिसिटी डेवलपमेंट

एस. यू. सी.आई और यू.टी.यू.सी. (लै.स.) द्वारा नागपुर में प्रदर्शन

कारपोरेशन तथा नागपुर के लघु उद्योगों के मजदूरों ने जुलूस में भारी संख्या में भाग लिया। इनके अतिरिक्त सरकारी कर्मचारी व आम लोग भी जुलूस में शामिल थे। जुलूस की अगुवाई एस० यू० सी० आई० की महाराष्ट्र शाखा के इन्चार्ज का.पी. आर. हरने, का. माधव भोंडे, का. घोलाराम पटले व नामदेव गावडे इत्यादि नेता कर रहे थे।

नारे लगाता, दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ता यह जुलूस जब विधान सभा के निकट मॉरिस कॉलेज चौक पहुंचा तो पुलिस के एक दस्ते ने आगे बढ़कर जुलूस का रास्ता रोक लिया। जुलूस तुरंत ही एक आम-सभा में परिवर्तित हो गया, जिसे का.पी.आर. हरने ने संबोधित किया। प्रदर्शनकारियों के प्रतिनिधि-मंडल को तीन घंटे तक रोक कर रखा गया। इस गैर-जनतांत्रिक रवैये के विरोध में प्रदर्शनकारियों ने नारे लगाए।

बुर्जुआ जनतंत्र

गतांक से आगे......

व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों को बनाए रखना हर सरकार का नैतिक दायित्व है

जनता के प्रति जवाबदेही तथा हर प्रकार के उत्तरदायित्व से मुक्त निर्विवाद सत्ता की यह धारणा; सामाजिक दायित्व रहित यह निरंकुश अधिकार, इतिहास में अन्तिम बात नहीं हो सकता था। इतिहास के अनिवार्य नियम के अनुसार एक दिन, आदमी के हताशापूर्ण संघर्ष ने समझौता रहित प्रतिरोध का रूप धारण कर लिया तथा अन्ततः राजतंत्र को या तो पूर्णतया मिटा डाला, अथवा उसे नाममात्र का मुखिया और या फिर प्रतीक मात्र बना छोड़ा। इसी का नाम इतिहास है, जिसे एक दिन अपरिवर्तनीय समझा जाता था, सामाजिक आन्दोलन का उमड़ता ज्वार उसे तिनके के समान बहाकर ले गया।

बुर्जुआजी ने भू-दासों को सामन्ती बंधनों से मुक्त किया; क्योंकि ऐसा करने में ही उत्पादन के विकास का सबसे बड़ा हित था। समाज-विकास के उस विशेष स्तर में उत्पादन के इस विकास के साथ बुर्जुआजी का हित ओत-प्रोत रूप से जुड़ा था। पूंजीपतियों को भूदासों के स्थान पर ऐसे 'स्वतंत्र मनुष्य' की आवश्यकता थी जिनके साथ वे 'अनुबन्ध की स्वतन्त्रता' का उपभोग कर सकें, ताकि वे उनके कारखानों और उद्योगों में वेतनभोगी मजदूरों के रूप में काम कर सकें। सभी पूंजीवादी समाजों में मजदूर आज इस 'अनुबंध की स्वतन्त्रता' के कड़वे स्वाद से परिचित हो चुके हैं। आज वे इस नई किस्म की दासता;मजदूरी की दासता से मुक्ति पाने के लिए प्रयत्नशील हैं। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखने से यह निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता और मुक्ति के लिए मनुष्य के संघर्ष में यह आगे की दिशा में एक कदम था।

व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की अवधारणा, स्वेच्छाचारी सामंती शासन के स्थान पर स्थापित हुए बुर्जुआ जनवादी शासन का आधार थी। बुर्जुआजी ने उस समय दावा किया था कि ये अधिकार और स्वतंत्रताएं मनुष्य केन्द्र ही उत्पन्न हुआ है, अतः इनका हनन कर उन्हें वंचित नहीं किया जा सकता। ये अधिकार और स्वतंत्रताएं कानूनी रूप से संहिताबद्ध नहीं अथवा 'अलिखित' रहीं सामाजिक संहिता अथवा प्रथा (Convention) के रूप में मान्यता प्राप्त थी। उन दिनों पूंजीवाद अपने विकास के प्रारम्भिक स्तर में था। अर्थव्यवस्था में स्वतंत्र प्रतियोगिता विद्यमान थी। अतः यह स्वाभाविक ही था कि अति तीव्र गति से प्रगति करने के लिए इसे ऐसे ढांचे की आवश्यकता थी जिसमें व्यक्ति अधिकार और स्वतंत्रताएं बनी रहें।

बुर्जुआ-राजनीतिक-दार्शनिकों तथा संविधान के विशेषज्ञों ने मूलभूत जनतान्त्रीय सिद्धांत के आधार पर सरकार के विभिन्न रूपों के ठोस ढांचे को प्रतिपादित किया। इस मूल-भूत जनतान्त्रीय सिद्धान्त का अर्थ था 'व्यक्ति शासन के स्थान पर कानून का शासन'। इस धारणा में राजतंत्र से सम्पूर्ण विच्छेद की भावना निहित थी।

इस सिद्धान्त की सार्वभौमी भावना को थामस पेन ने इन शब्दों में अभिव्यक्त किया-'समाज हर राज्य में एक वरदान है; मगर सरकार, सर्वश्रेष्ठ राज्य में भी एक अनिवार्य अभिशाप होती है।''

चूंकि सत्ता के बिना किसी के लिए भी शासन चलाना संभव नहीं था, अतः सरकार का होना अनिवार्य था। इसी से बुर्जुआ जनतंत्र के प्रारम्भिक दिनों के बुर्जुआ चिन्तकों ने सरकार की गतिविधियों पर अंकुश रखने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रतिबंध, नियंत्रण और सीमाएं निर्धारित की थीं। इस प्रकार अंकुश रखने को उस संविधानवाद की मुख्य गारंटी समझा गया जो अपने आप में मानव-स्वतन्त्रता का सार था। शासित जनता से प्राप्त न्यायसंगत शक्ति का सर्वोत्तम उपयोग हो, इस शक्ति का दुरुपयोग न हो। संविधानवाद का विचार इसी धारणा से संबंधित था।

अतः तत्कालीन बुर्जुआजी का दावा था कि 'कानून की दृष्टि में हर व्यक्ति समान है' का सिद्धांत उनके जनतन्त्रवाद की आधारशिला है। निःसंदेह यह राजतन्त्र से एक निर्णायक विच्छेद था। 'व्यक्ति शासन के बजाए कानून का शासन' की व्याख्या करने में सभी बुर्जुआ राजनीतिक सिद्धांतकार इस बात पर एकमत थे कि: इस सिद्धांत का अर्थ है कि समाज में निम्नलिखित चार शर्तें पूरी होनी चाहिए: 1. सरकार एक नियमबद्ध कार्यप्रणाली के अन्तर्गत निश्चित हुए कानून के अनुरूप ही कार्य करेगी। 2. किसी समय में किए गए जो कार्य कानून सम्मत थे, उन्हें अपराध की श्रेणी में लाने के लिए कानून नहीं बनाए जाएंगे। 3. सुनी अदालत में मुकदमा चलाए बिना, किसी को भी दोषी करार नहीं दिया जाएगा। 4. कानून की सामान्य प्रक्रिया को विशेष मामलों में लागू करते समय न्यायपालिका हर प्रकार के बाहरी दबाव और नियंत्रण से मुक्त रहेगी।

अतः बुर्जुआ सिद्धांतकारों ने माना कि, जब कोई राज्य 'कानून का शासन' प्रदान नहीं कर पाता तब सत्ताधारियों की स्वेच्छाचारिता और सनक से, शासित जनता का बचाव नहीं हो सकता। जब सरकार सार्वजनिक आलोचना और आपत्ति उठाने का अवसर दिए बिना ही कानून बनाती अथवा तोड़ती है तो अत्याचार, निरंकुशता और तानाशाही का खतरा होने लगता है।

जनतान्त्रिक राज्य को सामन्ती राजशाही की तरह भूस्वामियों की संस्था नहीं बल्कि मूलतः स्वतन्त्र राजनीतिक दलों की संस्था होना चाहिए। इस सिद्धांत से प्रभावित होकर बुर्जुआ राजनीतिक-दार्शनिकों और न्यायविदों ने, बुर्जुआ राज्य में मूलभूत व्यक्ति स्वतंत्रताओं को संहिताबद्ध करके, ऐसी प्रथाओं को प्रचलित करके, जिनमें वे मूलभूत स्वतंत्रताएं निहित हों, उन आधारभूत मूल्यों की सुरक्षा प्रदान करने का प्रयास किया।

बुर्जुआ राज्य में इन मूलभूत स्वतन्त्रताओं को दो भागों में बांटा जा सकता है। व्यक्तिगत अथवा नागरिक स्वतन्त्रताएं और राजनीतिक स्वतन्त्रताएं।

व्यक्तिगत अथवा नागरिक स्वतन्त्रताओं का अर्थ है; जीवन, स्वास्थ्य व मान-सम्मान की सुरक्षा सहित व्यक्तिगत सुरक्षा। कहीं भी आने-जाने की स्वतन्त्रता, व्यक्तिगत संपत्ति और इसके उपभोग की स्वतंत्रता, विचारों की अभिव्यक्ति के लिए बौद्धिक स्वतन्त्रता, प्रैस की स्वतंत्रता इत्यादि व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अंतर्गत आते हैं।

राजनीतिक स्वतंत्रता का अर्थ है, सार्वजनिक मताधिकार के आधार पर स्वतन्त्र चुनाव द्वारा सरकार बनाने का अधिकार। इसमें सभी को समान अवसर देते हुए, आम चुनाव द्वारा सरकार पर नियंत्रण रखने का अधिकार भी सम्मिलित है। राजनीतिक स्वतंत्रता का अर्थ यह भी है कि राज्य के मुखिया के विशेषाधिकार सीमित रहें। अपने कष्टों के निवारण के लिए लोगों को न्यायालयों में अपील करने, सरकार पर याचिका दायर करने और आत्मरक्षा के लिए हथियार इस्तेमाल करने का अधिकार भी रहे।

अतः स्वतंत्रता की भावना से तथा इस धारणा से संचालित हो कर कि प्रत्येक सरकार एक प्रकार का नैतिक उत्तरदायित्व लेकर निर्मित हुई है, यह माना गया था कि सरकार की गतिविधियां उसी सीमा तक उचित हैं, जहां तक वे व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों को बनाए रखती हैं, जिनके विषय में बुर्जुआजी ने दावा किया था कि इनका हनन नहीं किया जा सकता। इसीलिए 1776 में अमरीकी स्वतंत्रता के घोषणापत्र में कहा गया था कि: ''शासित लोगों की सहमति से न्यायसंगत शक्ति प्राप्त कर सरकार की स्थापना इसलिए हुई कि वह इन अधिकारों को सुरक्षित रख सके।

जब किसी भी प्रकार की सरकार अपने लक्ष्यों को नष्ट करने लगे, तो लोगों को अधिकार है कि वे उस सरकार को बदल दें; अथवा समाप्त कर दें, तथा नई सरकार का आधार ऐसे सिद्धांत हों, तथा इसकी ताकत को इस प्रकार गठित किया जाए कि जनता सुरक्षित और प्रसन्न रह सके।

अतः पूंजीवाद और बुर्जुआ जनतन्त्र के आरंभिक स्तर में बुर्जुआ राजनीतिक चिंतकों ने यह स्वीकार किया था कि राजनीतिक सत्ता के समक्ष व्यक्ति की आज्ञाकारिता निरपेक्ष नहीं है। इस आज्ञाकारिता की शर्त है कि मूलभूत अधिकार बने रहें। अतः व्यक्ति द्वारा 'प्रतिरोध करना, जब प्रतिरोध करना समाज के लिये आज्ञापालन से कम घातक हो पूरी तरह जायज है।''

स्वतंत्रता के विषय में इसी दृष्टिकोण को प्रतिबिम्बित करते हुए एक समय न्यूयार्क टाइम्स ने अपने संपादकीय में लिखा था:

'स्वतंत्रता का अर्थ है मतों की विभिन्नता इसका अर्थ है, परिवर्तन। हम एक ऐसे संविधान के अन्तर्गत, जिसका मूल ढांचा अपरिवर्तनीय है, विभिन्न मत रखते हैं, परीक्षण करते हैं तथा परिवर्तन लाते हैं। हम कभी भी ऐसे समाज का निर्माण नहीं कर सकते जो पूरी तरह पूर्ण और परिष्कृत हो। न ही हम ऐसा करना चाहते हैं। ऐसा करने का अर्थ होगा अवरोध और मृत्यु। हम अन्तिम न्याय पाना चाहते हैं, और उसकी ओर बढ़ रहे हैं। अब तक हम कभी पहुंच नहीं सकते। नए-नए प्रश्न हमेशा ही उठते रहेंगे समस्याएं बारंबार उत्पन्न होंगी। जनवादी प्रक्रिया और स्वतंत्रता ही वह चीज है, जिसके

(शेष पृष्ठ 7 पर)

वर्तमान अर्थव्यवस्था

(गतांक से आगे)

कंप्यूटरीकरण-बहुराष्ट्रीय कंपनियों का नया व अत्यधिक घातक हमला

अगले मौजूदा वर्ष में सरकार ने एकाधिकारी पूंजीपतियों को 900 करोड़ रुपए की रियायतें दी हैं। इसी बजट में सरकार ने इन्हीं 4187 करोड़ रुपए के अनुदान और रियायतें (Subsidy & Subventions) देकर साबित कर दिया है कि निरंतर संकुचित होते बाजार में एकाधिकारियों के अतिलाभ (Super Profit) को बनाए रखने के लिये सरकार कृतसंकल्प है। ग्रामीण व औद्योगिक क्षेत्र के पूंजीपतियों को सौंपे दी जाने वाली इस भारी धनराशि के अतिरिक्त सार्वजनिक प्रशासन पर होने वाला फिजूल सरकारी खर्च बढ़ता ही जा रहा है। इस समय यह खर्च 15,452 करोड़ रुपए तक पहुंच गया है। प्रतिरक्षा-व्यय भी निरंतर रूप से बढ़ता चला जा रहा है। अनुमान है कि 7वीं पंचवर्षीय योजना में यह व्यय 75,000 करोड़ रुपए तक पहुंच जाएगा। इतनी फजूलखर्ची के बाद अधिक से अधिक औद्योगिक इकाइयां स्थापित करने, आधारभूत ढांचे का विस्तार करने तथा करोड़ों मेहनतकश लोगों की न्यूनतम जरूरतों को पूरा करने जैसे आवश्यक कामों पर खर्च करने के लिये सरकार के पास बहुत कम धन बचता है। यह दिवालिया नीति अर्थ-व्यवस्था का दोहरा नुकसान कर रही है। एक तो यह कि रोजगार और आधारभूत ढांचे की बढ़ती जरूरतों के प्रति अपराधपूर्ण लापरवाही के कारण बाजार और भी संकुचित हो रहा है, आधारभूत ढांचे में अवरोध उत्पन्न हो रहा है, स्थापित औद्योगिक क्षमता और भी व्यर्थ हो रही है, औद्योगिक विस्थापन (Industrial dislocation) हो रहा है तथा लागत वृद्धि के कारण मुद्रास्फीति और भी बढ़ रही है। दूसरे पूंजी के बर्बर शोषण के कारण लोगों की घटती जा रही क्रय-शक्ति के फलस्वरूप घरेलू बाजार तीव्र संकट में फंसा हुआ है। गला-काट प्रतियोगिता के कारण, भारी सरकारी अनुदानों के बावजूद बाहरी बाजार में भी पैर जमाना मुश्किल काम है। पब्लिक निवेश की निधि पूंजी के लिये पहले की सीमा तक बाजार उत्पन्न करने में अक्षम है। औद्योगिक रुग्णता का यह सबसे मुख्य कारण है।

एक ओर तो पहले से ही भयावह बेरोजगारी की स्थिति है, जो हर वर्ष और भी अधिक बेरोजगारों के आ जाने से और भी विषम होती जा रही है, और दूसरी तरफ उच्च तकनीक और कम्प्यूटरीकरण के प्रति सरकार का दुराग्रह। विदेशी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ सहयोग द्वारा उच्च तकनीक को देश में लाने के लिए आयात नीति को उदार बना दिया गया है। यह सहयोग अधिकतर अमरीकी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के साथ किया जा रहा है। इस उच्च तकनीक के ऊपर अब तक 8000 करोड़ रुपए से अधिक खर्च किया जा चुका है। यह सब देश के तकनीकी विकास के नाम पर किया जा रहा है। लेकिन यह साधारण ज्ञान की बात है कि तकनीक को एकाकी रूप में नहीं देखा जा सकता। इसका सामाजिक-आर्थिक जीवन पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। उच्च तकनीक श्रमजीवी जनता के लिए तभी हितकारी हो सकती है जब इसका उपयोग विकृत रूप में न किया जाए। देश की अर्थव्यवस्था की वर्तमान अवस्था में शक्तिशाली बहुराष्ट्रीय कंपनियों के सहयोग से उच्च तकनीक लाने का अर्थ है: श्रम पर आधारित उत्पादन प्रक्रिया के स्थान पर पूंजी पर आधारित उत्पादन प्रक्रिया को प्रश्रय देना। इस प्रक्रिया में उत्पादन क्षमता कई गुणा बढ़ जाएगी। तथा छोटी व मझली औद्योगिक इकाइयां नष्ट हो जाएंगी। फलतः एकाधिकारी घरानों की शक्ति तीव्र हो जाएगी। ये छोटी इकाइयां तभी अस्तित्व में रह सकती हैं, जब वे विशाल उद्योगों के लिए सहायक इकाई (ancilliary unit) के रूप में कार्य करें।

इस नीति के फलस्वरूप वर्तमान रोजगार क्षमता भी तहस-नहस हो जाएगी। संगठित क्षेत्र में कार्यरत वर्तमान श्रमशक्ति का अधिकांश अव्यवस्थित हो जाएगा। यही नहीं असंगठित क्षेत्र में भी रोजगार व कमाई के अवसरों पर भी इसका विपरीत प्रभाव पड़ेगा। उल्लेखनीय है कि अब तक यह असंगठित क्षेत्र ही रोजगार व कमाई का मुख्य आधार बना हुआ है। मजदूरी-लागत को कम करके तथा उत्पादन-क्षमता बढ़ाने की दलील उसी अवस्था में अर्थपूर्ण होती है, जब बाजार की मांग बढ़ती हो तथा उसमें विस्तार हो रहा हो। इस नीति से तो घरेलू बाजार और भी संकुचित हो जाएगा। इसका लाभ एकाधिकारी वित्तीय पूंजी को मिलेगा। यह पूंजी अपने वरिष्ठ भागीदार विदेशी वित्तीय पूंजी के साथ मजदूरी लागत कम करके तथा काम का बोझ बढ़ाकर और भी ऊंची दर पर मुनाफा कमायेगी। साथ-ही-साथ यह पूंजी विश्व पूंजीवादी बाजार में और तीसरी दुनिया के देशों के बाजार में प्रवेश कर इसके बड़े भाग पर कब्जा करने की कोशिश करेगी।

मजदूरी तथा उत्पादकता

पूर्जुआ प्रचारक इस बात का भ्रम भरा प्रचार करते हैं कि मजदूर वेतन-वृद्धि के लिये नाजायज मांग उठाते हैं; तथा वे उत्पादकता कम होने के जिम्मेदार हैं। लेकिन तथ्य इस झूठे प्रचार की पोल खोल देते हैं। वार्षिक औद्योगिक सर्वेक्षण तथा अन्य अधिकृत आंकड़ों के अनुसार 1970-71 से 1978-79 के दौरान कुल वेतन का भाग 34.3 प्रतिशत से घट कर 31.3 प्रतिशत रह गया जबकि 1970-71 की कीमतों के आधार पर संगठित व असंगठित दोनों ही क्षेत्रों में कुल औसत मूल्य 34519 करोड़ रु. से बढ़कर 49641 करोड़ रु. हो गया, अर्थात् इसमें 48.8 % की वृद्धि हुई। रसायन, सीमेंट, मोटरगाड़ी व ऐसे ही अन्य उद्योगों के समूह का नमूने के तौर पर अध्ययन करने से पता चलता है कि 1960-70 के दशक में प्रति कर्मचारी 5498 रु. का औसत मूल्य (average value) अर्जित किया गया। बाद के वर्षों में इस मूल्य की मात्रा अधिक हो सकती है। मगर इसी अवधि के दौरान वेतन वृद्धि के मूल्य में मात्र 9.83% की बढ़ोतरी हुई। सरकार ने खेतों, कारखानों व अन्य प्रतिष्ठानों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए आज तक भी जीवन-योग्य वेतन की बात तो दूर, किसी प्रकार न्यूनतम मजदूरी भी सुनिश्चित नहीं की है। इस पर भी छठी पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज में सरकार ने निर्लज्जतापूर्वक यह घोषणा की है कि "पूरी तरह रोजगार प्राप्त लोगों को अपनी असली आय में सुधार के लिये आग्रह नहीं करना चाहिये, ताकि कीमतों में स्थायित्व लाया जा सके। ऐसा करना विकास प्रयास के लिए अति आवश्यक है।" कहने का तात्पर्य यह है कि सरकार बार-बार इस झूठ को दोहरा रही है कि आसमान छूती मंहगाई का कारण वेतन-वृद्धि है। जबकि सच्चाई एकदम इसके विपरीत है। भारत जैसे देश में जो व्यवस्था चल रही है, उसके अन्तर्गत श्रमिक-जनता को जीवित रहने योग्य न्यूनतम वेतन से भी वंचित रखा जाता है। यही नहीं मुद्रास्फीति की ऊंची दर के कारण उनके वास्तविक वेतन में भी गिरावट आ रही है। यद्यपि सरकार अनजाने में ही स्वीकार करती है कि 'विकास' से उसका असली तात्पर्य, पूंजीवादी विकास से ही है, जो वेतन-स्तर में सुधार और लोगों के जीवन-स्तर के ऊपर उठने का प्रत्यक्ष रूप से विरोधी है।

ग्रामीण मजदूरों और गरीब किसानों की दशा

हमारे देश में पिछले तीन दशकों में कृषि-उत्पादन लगभग तीन गुणा बढ़ा है; मगर खेत-मजदूरों, बटाईदार व निर्धन किसानों की आमदनी और जीवन स्तर घटते-घटते एकदम नीचे पहुंच गया है। कृषि मजदूरों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। आज कृषि मजदूरों के परिवार कुल ग्रामीण परिवारों का लगभग एक तिहाई हैं। इससे पता चलता है कि पूंजीवादी नियम के अनुसार खेती योग्य भूमि आम गरीब किसानों के हाथों से निकल कर चन्द मुट्ठी भर हाथों में केन्द्रित होती जा रही है। ग्रामीण श्रम-शक्ति के सामने गंभीर संकट की स्थिति है। आधे कृषि मजदूरों के परिवारों के पास बिल्कुल जमीन नहीं है। शेष में से अधिकांश के पास एक एकड़ से कम भूमि है। इन्हें साल में तीन से लेकर पांच महीने तक काम मिलता है। शेष समय वे काम की तलाश में इधर-उधर भटकते हुए नाममात्र की मजदूरी पर हर तरह के छोटे-मोटे काम करते हैं। सरकार द्वारा घोषित न्यूनतम मजदूरी कुछ भी हो, इन्हें औसतन 3रु. से लेकर 10 रु. प्रतिदिन तक ही मजदूरी मिलती है। मजदूरी की यह दर इस बात पर निर्भर करती है कि कृषि मजदूर संगठित है अथवा असंगठित।

देहाती मजदूर बिना मजदूरी काम व अन्तहीन कर्जे के बर्बर शोषण की बेड़ियों में आज भी जकड़े हुए हैं। परिणामस्वरूप अधिकांश, ग्रामीण श्रम-शक्ति अमानवीय जीवन गुजारने को मजबूर है। इनमें से 78% कुपोषण के शिकार हैं, 58% के पास रहने लायक सुरक्षित घर नहीं है; पक्के मकान सिर्फ 1 % के पास है। सरकार 'बन्धुआ मजदूरी' को समाप्त करने की घोषणा तो करती है, मगर इस बर्बरता का अन्त करने के लिये प्रभावकारी कदम नहीं उठाती।

कीमतों की स्थिति

केवल पूंजीवादी विकास के नियम के कारण ही नहीं, बल्कि सरकार की जनविरोधी राजस्व व वित्तीय नीतियों के कारण भी कीमतें अलौकिक और असहनीय स्थिति में पहुंच गई हैं। आंकड़े देने का कोई लाभ नहीं क्योंकि आम अनुभव ही उत्तम मापक है। फिर भी इन आंकड़ों पर एक नजर डाल लेना सुविधाजनक होगा। सरकार के अपने आंकड़ों के अनुसार 1981 में औद्योगिक मजदूरों के लिए उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (Consumer Price Index) में 51 अंकों की वृद्धि हुई (1960—100)। 1983 में यह वृद्धि 71 अंकों तक चली गई। गत वर्ष 16 मार्च को केंद्रीय बजट आने के मात्र तीन सप्ताह

आम जनता को लूट कर एकाधिकारी पूंजीपतियों को मोटा बनाया जा रहा है

साथ ही मूल्य सूचकांक 340 से छलांग लगाकर 351.5 तक जा पहुंचा। इस प्रकार इसमें 21.5 अंकों की वृद्धि हुई। फलस्वरूप सभी आवश्यक वस्तुओं के दाम बेतहाशा बढ़ गए। मार्च 1984 में अखिल भारतीय मूल्य सूचकांक 588 था। इस प्रकार देखा गया कि इस एक वर्ष में सूचकांक 36 अंक ऊपर चला गया।

वेतन में गिरावट व छलपूर्ण मूल्य सूचकांक

नित बढ़ती कीमतों और महंगाई-भत्ता पद्धति द्वारा इन्हें क्षतिपूर्ति न बनाए जाने के कारण इस दयनीय वेतन-स्तर में गिरावट आती जा रही है। सरकार द्वारा प्रस्तुत किया गया मूल्य सूचकांक जीवनयापन की सही लागत को ठीक रूप से प्रतिबिंबित नहीं करता। सरकार अक्सर आधार वर्ष में परिवर्तन करती रहती है। ऐसा करते समय संदर्भ सूत्र तथा पारिवारिक बजट चार्टों की सुस्पष्टता व व्यापकता के मामले में अंतर्राष्ट्रीय श्रम-संगठन (ILO) की मान्यताओं और मानदण्डों का भी अनुसरण नहीं किया जाता। मूल्य सूचकांक में प्रति अंक 1.35 रु. की क्षतिपूर्ति की दर यद्यपि प्रति अंक 1.65 रु. कर दी गई है। फिर भी यह दर बाजार के वर्तमान भाव की दृष्टि से मुद्रास्फीति के असर को निष्प्रभावी बनाने में पूरी तरह अपर्याप्त है। अब तक सभी मजदूर फेडरेशनें यू.टी.यू.सी. (लेनिन सरणी) हमेशा ही यह मांग करती रही है कि बाजार भावों के आधार पर मूल्य सूचकांक का निर्धारण करते समय अंतर्राष्ट्रीय मान्यताओं और मानकों (Standards) के अनुसार चला जाए। ग्रामीण व असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों सहित सभी श्रमिकों को पहले से ही कम मिलने वाले वेतन में मूल्य वृद्धि के कारण होने वाली गिरावट को पूरी तरह निष्प्रभावी बनाया जाय।

सुरसा के मुंह की तरह बढ़ती गरीबी और जनसाधारण की दुर्दशा

देश में पूंजीवादी विकास का अपरिहार्य परिणाम सामने है। शहरी व ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में ही पूंजी का संकेन्द्रण हो चुका है। श्रमिक जनता के एक विशाल भाग को गरीबी की सीमा रेखा से नीचे धकेल दिया गया है। छठी पंच-वर्षीय योजना के दस्तावेज में कृषि मंत्री ने स्वीकार किया है कि कुल कृषि योग्य भूमि का मात्र 26.3 भाग छोटी जोतों के अन्तर्गत है। 2 हेक्टेयर से कम की ये छोटी जोतें संख्या में 74.5% हैं, जब कि कृषि योग्य भूमि का 22.8 प्रतिशत भाग 3.5% बड़ी जोत वाले किसानों के हाथ में है। नवीनतम ग्रामीण सर्वेक्षण से पता चलता है कि मात्र 15% ग्रामीण परिवारों के हाथों में कुल ग्रामीण संपदा का 56% से अधिक अंश है। इसी प्रकार लगभग बीस वर्ष पहले NCAER की रिपोर्ट में कहा गया था कि शहरी संपत्ति का 83% मात्र 8% शहरी परिवारों के कब्जे में है। जबकि शेष 92% शहरी परिवारों के पास, शहरी संपत्ति का मात्र 27% भाग रह गया है। शहरी संपत्ति के संकेन्द्रण की यह प्रक्रिया अब और भी बढ़ गई है। मंदी के कारण औद्योगिक निवेश में तीव्र गिरावट आने से शहरों में भू-सम्पत्ति का व्यापार खूब फल-फूल रहा है। जबकि सरकार श्रमजीवी जनता के लिए मकान बनाने के लिए पूरी तरह उदासीन है।

इसी का अनिवार्य परिणाम यह हो रहा है कि असीम गरीबी और दुर्दशा तेजी से बढ़ रही है। सरकार द्वारा निर्धारित गरीबी सीमा रेखा के नीचे 60 करोड़ लोग रह रहे हैं, जबकि देश की कुल आबादी 75 करोड़ है। गरीबी की सीमा रेखा इस आधार पर तैयार की गई है कि 1970-71 की कीमतों के अनुसार प्रति व्यक्ति 76 रु. प्रति मास उपभोग किया जाता है। सरकार यह भी अच्छी तरह से जानती है कि इस प्रकार निर्धारित गरीबी सीमा रेखा का वास्तविकता से कोई नाता नहीं है। इसी से 1978 की विधि आयोग की रिपोर्ट में कहा गया है कि अपराध के लिए कैद किए गए व्यक्ति पर भी भोजन व अन्य खर्चों पर प्रति व्यक्ति 1732 रु. प्रति वर्ष व्यय करना पड़ता है। अतः इस देश में जहां समाजवाद लाने के नारे गुंजाए जाते हैं ईमानदार मजदूर को नहीं बल्कि अपराधी को केन्द्र करके जीवन-यापन की लागत तय की जाती है।

वित्तीय पर्यवेक्षाएं

वित्तीय व्यवस्था, टैक्स व अन्य तरीकों से श्रमिक जनता की क्रय-शक्ति पर डाका डाल कर, पूंजीपतियों को भारी रियायतें व अनुदान उपलब्ध करा कर, उन्हें भारी मुनाफा कमाने का अवसर देने तथा सैनिक खर्चों को पूरा करने की पद्धति में तब्दील हो चुकी है। इस प्रकार हम देख रहे हैं कि विनाशकारी प्रकृति के अपरोक्ष कर तेजी के साथ बढ़ रहे हैं। उदाहरण के लिए 1950-51 में टैक्सों से हुई 404 करोड़ रु. की कुल सरकारी वसूली का 16.8% आबकारी शुल्क से प्राप्त हुआ था। 1982-84 में टैक्सों द्वारा 17,695 करोड़ रु. की सरकारी वसूली में आबकारी शुल्क 8058 करोड़ रु. अर्थात कुल वसूली का 45% रहा। मिट्टी के तेल से 168.3 करोड़ रु., चीनी से 166 करोड़ रु., सूती वस्त्रों से 105.3 करोड़ रु., दवाइयों से 119 करोड़ रु., के आबकारी शुल्क (Excise Duty) की वसूली हुई। ये सभी वस्तुएं जन उपभोग की वस्तुएं हैं।

जहां तक गैर-वेतन भोगी अमीरों, एकाधिकारी घरानों और काले धन के स्वामियों पर कर लगाने का प्रश्न है, सरकार असहाय नजर आती है। दूसरी ओर आयकर देने वाले वेतन भोगियों की संख्या 1950-61 में 6263 से बढ़कर 1980-81 में 408,937 हो गई। इसी अवधि में गैर-वेतनभोगी आयकर दाताओं की संख्या 4873 से बढ़ कर मात्र 6732 तक ही पहुंची। इससे साफ हो जाता है कि सरकारी टैक्स-प्रशासन में व्याप्त बहुत भ्रष्टाचार इन लोगों को सुरक्षा प्रदान करता है। एकाधिकारी घरानों पर 1600 करोड़ रु. का आबकारी शुल्क बकाया है। 435 बड़ी बीमार औद्योगिक इकाइयों से बकाया-शुल्क का 260 करोड़ रु., तथा बैंक ऋणों और अग्रिम राशि व सार्वजनिक वित्तीय संस्थाओं का 1728 करोड़ रु. फंसा हुआ है। शीर्षस्थ एकाधिकारी अपनी असली आमदनी को छिपा कर टैक्सों की चोरी करते हैं। 1981-82 में बिड़ला घराने ने 3.71 करोड़ रु. और 1982-83 में 14027 करोड़ रु. के आयकर की चोरी की। जहां तक ग्रामीण पूंजीपतियों और अमीर लोगों का प्रश्न है, उन्हें तो हर प्रकार के टैक्स से सुरक्षित रखा ही गया है। यद्यपि बहुतों पहले प्रत्यक्ष कर जांच कमेटी (वांचू कमेटी) ने कृषिगत करारोपण (Taxation) की वृद्धिशील दर की सिफारिश की थी।

पूंजीपतियों द्वारा मुनाफे और दौलत के अम्बार

लाखों-करोड़ों श्रमिक जनता की कंगाली और भुखमरी की स्थिति से फायदा उठा कर पूंजीपति लोग अकूत मुनाफा और दौलत के पहाड़ खड़े कर रहे हैं। CMIE (सेंटर फार मानिटरिंग इण्डियन इकोनोमी) के अनुसार छठी योजना (1980-81 से 1984-85) की अवधि में गैर बैंकिंग, गैर-वित्तीय-कम्पनियों के अतिरिक्त निजि सहयोगी क्षेत्र (Private Corporate Sector) की कुल परिसम्पत्ति का परिमाण 45,400 करोड़ रु. था। इसका 32% आन्तरिक स्रोतों तथा 68% बाह्य स्रोतों से उपलब्ध कराया गया था। टैक्स चुकाने और ब्याज का भुगतान करने से पहले इस क्षेत्र में 1984 की तुलना में 9% अधिक, व शुद्ध लाभ 4% अधिक हुआ।

पूंजीपति और काले धन के स्वामी किस रफ्तार से दौलत के पहाड़ खड़े कर रहे हैं, उसका अनुमान इसी बात से लगाया जा रहा है कि मात्र पांच वर्ष पहले तमाम कंपनियों द्वारा जारी किए गए शेयरों व डिबेंचरों की एक वर्ष की कुल धन राशि 100 करोड़ रु. बनती थी। आज अकेली एक कम्पनी एक ही महीने में उतना ही धन बाजार से उठा रही है। गत वर्ष निवेशकों ने नए शेयरों में 2000 करोड़ रु. लगाए। यह राशि सरकार द्वारा वसूल किए गए 1746 करोड़ रुपये के आयकर से भी अधिक थी। आगामी वर्ष में स्टाक और शेयरों में 3000 करोड़ रु. का निवेश होने का अनुमान है। जिस देश में काला धन पानी की तरह बह रहा है, उसी देश की सरकार संसाधनों की कमी का रोना रो रही है। गरीब श्रमिक जनता पर चोट कर उनके पैसे से पूंजीपतियों और काले धन वालों के प्रति लाभ के चक्र को चलाया जा रहा है जब कि काले धन पर नकेल भी नहीं कसी जाती। (समाप्त)

□

मित्रमंडों से बातचीत...
(पृष्ठ 6 का शेष)

कामों के लिए आवश्यक धनराशि मालिकों से टैक्स के रूप में ली जा सकती है। इन सुझावों के साथ कामरेड प्रीतीश नन्दा ने अपना वक्तव्य समाप्त किया।

इसके बाद अनेक ट्रेड यूनियन नेताओं ने वेतनभोगी कर्मचारियों को करों में कुछ राहत देने के लिये वित्त मन्त्री को बधाई दी। कुछ नेताओं ने 1000 से 5000 रु. मासिक कमाने वाले तबके की क्रय-शक्ति को बचाए रखने का सुझाव दिया। लेकिन मूल प्रश्न को किसी ने छुआ तक भी नहीं।

अन्त में वित्त मन्त्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने कामरेड नन्दा की बात का खंडन करते हुए कहा कि पिछले वर्ष 12 करोड़ रुपये के टैक्स का लक्ष्य रखा गया था, लेकिन सरकार 23 करोड़ रु. वसूल करने में सफल रही। वित्त मन्त्री ने कहा कि सरकार आत्म-निर्भर होने की बात कर चुकी है। देश की आर्थिक स्वतन्त्रता को साम्राज्यवादियों के पास गिरवी नहीं रखा जाएगा। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) द्वारा कर्ज देने पर लगाई गई शर्तों का विरोध जारी रहेगा। वित्त मन्त्री ने कहा कि उनके विचार से सभी विकासशील देशों को अभी साम्राज्यवादी देशों से ऋण और अन्य सहायता लेनी ही पड़ेगी। आधुनिक तकनीक भी लागू करनी ही होगी। उन्होंने स्वीकार किया कि इसके फलस्वरूप श्रम-शक्ति को घटाना पड़ेगा, लेकिन और किया भी क्या जा सकता है?

किसी भी ठोस मुद्दे पर आश्वासन पाए बिना ही बैठक की समाप्ति हुई।

●

वित्त मंत्री से ट्रेड यूनियनों की बजट पूर्व बातचीत

गत 21 जनवरी 1986 को केन्द्रीय वित्त मन्त्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने केन्द्रीय ट्रेड यूनियन संगठनों की बजट-पूर्व बैठक बुलाई। बैठक में यू० टी० यू० सी० (लेनिन सरणी) के महासचिव कामरेड प्रीतीश चन्दा, इन्टक के अध्यक्ष श्री रामानुजम, एटक के अध्यक्ष श्री राजबहादुर गौड़, हिन्द मजदूर सभा के श्री राजनिशोर रामानाराय, भारतीय मजदूर संघ के अध्यक्ष श्री मनोहर मेहता, सीटू के सचिव श्री एम. चक्रवर्ती व अन्य नेता उपस्थित थे।

सरकार की ओर से केन्द्रीय वित्त मन्त्री के अतिरिक्त, राज्य मन्त्री श्री जनार्दन पुजारी, वित्त सचिव आर्थिक सलाहकार व अन्य अधिकारियों सहित बी० पी० ई० (BPE) ग्रुप भी उपस्थित थे।

बातचीत की शुरुआत करते हुए वित्त मन्त्री ने कहा कि आगामी बजट में सातवीं योजना प्रारम्भ को ध्यान में रखा जाएगा तथा सार्वजनिक क्षेत्र, गरीबी-विरोधी सुधारों और करों में राहत पर विशेष बल दिया जाएगा। का० प्रीतीश चन्दा ने अपने वक्तव्य में कहा कि गत वर्ष इसी अवसर पर यू० टी० यू० सी० (ले०स०) ने कहा था कि देश की अकर्मण्य अर्थ-व्यवस्था की ओर ध्यान दिया जाना चाहिये। उस समय हमने कहा था कि एकाधिकारी पूंजीपतियों को रियायतें न दी जाएं। लेकिन सरकार ने ठीक इसका उल्टा किया और परिणाम आज सामने है। उन्होंने कहा कि यदि वित्त मन्त्री वास्तव में ट्रेड यूनियनों से सलाह-मशवरा करने के मामले में गम्भीर हैं तो उन्हें ट्रेड यूनियनों की सलाह पर गौर करना चाहिये। अन्यथा ऐसी बैठकें बुलाकर सलाह-मशवरा करने का कोई अर्थ नहीं है। यदि सरकार सोचती है कि इन बैठकों से सरकारी नीतियों पर ट्रेड यूनियनों की सहमति का ठप्पा लगवा लिया जाएगा तो वह भ्रम में है।

कामरेड चन्दा ने कहा कि मुख्य प्रश्न वर्ग दृष्टिकोण का प्रश्न है। सरकार इस बात को झुठला नहीं सकती कि वह एकाधिकारी पूंजी की सेवा कर रही है। पिछले वर्ष सरकार ने अपने बजट में एकाधिकारी पूंजीपतियों को करों में 9000 करोड़ रुपए की राहत दी थी। इसके अतिरिक्त भी अन्य मार्ग रियायतें दी गई थीं। जबकि धन के स्वामियों तक को राहत दी गई थी जबकि आम लोगों पर अप्रत्यक्ष करों का बोझ बढ़ा दिया गया था। सरकार ने मूल (core) क्षेत्र के उत्पादों के दाम तथा भाड़े बढ़ाकर मूल्य वृद्धि की गति को तीव्र कर दिया। परिणाम स्वरूप आम आदमी की ओर भी गरीब तथा देशी-विदेशी पूंजीपतियों और एकाधिकारी पूंजीपतियों की तोंद को और भी मोटा बना दिया गया।

इस बार भी देश की अर्थ-व्यवस्था की स्थिति काफी गम्भीर है। पहले ही देश में 25 करोड़ श्रम-योग्य लोगों में 8 करोड़ से अधिक बेरोजगार हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्र में करोड़ों लोग 'छुपे बेरोजगार' (disguised unemployed) हैं। 10,000 से अधिक औद्योगिक इकाइयां बन्द पड़ी हैं। हजारों औद्योगिक इकाइयों में रुग्णता (sickness), बन्दी (closure) और ले-ऑफ चल रहा है।

मन्त्री जी कहते हैं कि सरकार गरीबी-विरोधी सुधारों पर ध्यान देगी। मगर इन करोड़ों लोगों को रोजगार मुहैया कराने की बात पर सरकार चुप क्यों है? आम लोगों की क्रय-शक्ति बढ़ाए बिना घरेलू बाजार का विस्तार करने अथवा इसे मजबूत बनाने की आशा करना व्यर्थ है। ऐसा किये बिना क्या हम आत्म-निर्भर बन सकेंगे?

कामरेड चन्दा ने आगे कहा कि सरकार आधुनिकीकरण की दिशा में एक बड़ा कदम उठा रही है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये कम्प्यूटरीकरण का सहारा लेते तथा साम्राज्यवादी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के लिये देश के दरवाजे खोल रहे हैं।

देश की आयात नीति को उदार बना दिया गया है। निजि क्षेत्र को सार्वजनिक क्षेत्र के ऊपर प्राथमिकता दी जा रही है। पैट्रो-केमिकल्स, पैट्रोलियम, स्टील, खाद तथा विद्युत-उत्पादन जैसे सार्वजनिक क्षेत्र के आधारभूत उद्योगों को भी निजि क्षेत्र को सौंप देने की कोशिश चल रही है। कामरेड चन्दा ने प्रश्न किया कि इस सब का उद्देश्य क्या है? समाजवाद की दिशा में जाना अथवा ऐसे मजबूत पूंजीवाद के आर्थिक आधार को सुदृढ़ बनाना, जिसमें साम्राज्यवादी प्रवृत्तियां निहित हैं? इन सवालों के प्रति हम आंखें मूंदे नहीं रह सकते।

(यहीं का० चन्दा के वक्तव्य के बीच में पहले इन्टक नेता श्री रामानुजम और फिर श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने कहा कि ये राजनीति की बातें हैं तथा अति सामान्य हैं।) कामरेड चन्दा ने अपना वक्तव्य जारी रखते हुए कहा कि हम आधुनिकीकरण और तकनीकी विकास के विरोधी नहीं हैं। उल्टे हम तो चाहते हैं कि आधुनिकीकरण हो और आदमी को हाड़-तोड़ शारीरिक श्रम से राहत मिले। आदमी की भलाई के लिये प्रकृति का उपयोग करने के लिये हम तकनीकी विकास भी चाहते हैं। मूल प्रश्न है आधुनिकीकरण और उच्च तकनीक के दुरुपयोग का प्रश्न।

आज श्रम लागत को कम करने व श्रमशक्ति के बिना ही काम चलाने के लिये आधुनिकीकरण और उच्च तकनीक को लागू किया जा रहा है। पहले से ही 8 करोड़ से भी अधिक लोग बेरोजगार हैं। इस धारा से और भी करोड़ों लोग बेरोजगार हो जाएंगे। हम इसी बात से चिन्तित हैं। इसका अर्थ है श्रमिक वर्ग की तबाही। हम मूक दर्शक की तरह यह होते नहीं देख सकते। कामरेड चन्दा ने उदाहरण देते हुए बताया कि उड़ीसा स्थित नुआमुन्डा की लोहा खदान (टाटा कम्पनी) में मशीनीकरण के कारण 30 हजार मजदूर बेरोजगार बना दिये गए हैं। उन्होंने बताया कि इस समय हमारी यूनियन में जुड़े नुआमुन्डा खदान उपखण्ड के पांच हजार से अधिक श्रमिक खदान क्षेत्र से राजधानी भुवनेश्वर तक की पद-यात्रा पर निकले हुए हैं। अन्य उद्योगों में भी यही हो रहा है, अथवा होने जा रहा है। इस समस्या का हल करना ही होगा।

जिस प्रकार साम्राज्यवादी बहुराष्ट्रीय कम्पनियां, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) व अन्य साम्राज्यवादी वित्तीय संस्थान अत्यन्त मनमानी शर्तों पर ऋण दे रहे हैं, वह भी चिन्ता का विषय है। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा लगाई गई शर्तों के कारण सरकार को बस-भाड़े और रेल भाड़े तथा करों में वृद्धि करनी पड़ी है। ये श्रम-शक्ति को कम करने, उपभोक्ता वस्तुओं के दाम बढ़ाने की शर्तें रखते हैं। केन्द्र सरकार और अनेक राज्य सरकारें इन शर्तों को मानकर अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को प्रसन्न करती हैं। क्या ये सब बातें भारत की जनता के हित में हैं? अतः ट्रेड यूनियनें मांग करती हैं कि सरकार ऐसी शर्तों का विरोध करे तथा इस प्रकार के कर्ज के जाल में न फंसे।

वित्त मन्त्री को सम्बोधित करते हुए कामरेड चन्दा ने कहा कि मुख्य प्रश्न यह है कि आगामी बजट में वित्त मन्त्री क्या सब व्यवस्थाएं। क्या वे 1) बेरोजगारी 2) श्रमिक जनता के असली वेतन में गिरावट 3) कारखाना बन्दी व 4) औद्योगिक रुग्णता जैसी अहम समस्याओं को ध्यान में रखेंगे? इस बात को ध्यान में रखते हुए कि हमारे देश की कुल श्रम शक्ति का लगभग 80% श्रम-आधारित उद्योगों (Labour intensive industries) में लगा है, क्या वे श्रम आधारित उद्योगों के स्थान पर पूंजी-आधारित उद्योगों (capital intensive industries) को वरीयता देंगे? एक और महत्वपूर्ण मुद्दा यह है कि क्या वित्त मन्त्री इस साल के बजट में शिक्षा, स्वास्थ्य व सामाजिक भलाई के कामों पर कुछ पैसा खर्च करने की बात सोचते हैं: जबकि रक्षा, पुलिस, और अर्ध-सैनिक बलों जैसी अनुत्पादक मदों पर खर्च और भी बढ़ाने की बात?

यद्यपि हम जानते हैं कि सरकार शिक्षा को तिलांजलि देने पर तुली है। फलस्वरूप शिक्षा मन्त्रालय को समाप्त कर उसे 'मानव संसाधन मन्त्रालय' के अन्तर्गत ले आया गया है। इस पर श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने कामरेड चन्दा को बीच में टोकते हुए पूछा "अब पड़ोसी देश की ओर से खतरा बना हो तो आप प्रतिरक्षा को प्राथमिकता देंगे अथवा शिक्षा को?" इस पर कामरेड चन्दा ने तुरन्त कहा कि, "मैं शिक्षा को प्राथमिकता दूंगा, क्योंकि देश के लोग ही देश की बेहतरीन ढंग से रक्षा कर सकते हैं। हम अपनी रक्षा के लिए मात्र सैन्यबल और हथियारों पर निर्भर नहीं रह सकते। जब लोगों को उचित शिक्षा मिलती है, जब उनका नैतिक व सांस्कृतिक स्तर ऊंचा रहता है, जब उनका आर्थिक जीवन सुदृढ़ होता है, तब ऐसे लोग दुश्मन के हर हमले से देश की रक्षा कर सकते हैं। ऐसे लोग हर चीज के बारे में स्वयं निर्णय लेते हैं।" कामरेड चन्दा ने आगे कहा कि यह नहीं भूलना चाहिये कि देश की आजादी के लिये यही लोग लड़े थे।

कामरेड चन्दा ने जब प्रश्न किया कि क्या सरकार एकाधिकारी पूंजीपतियों को और भी अधिक रियायतें व अनुदान देने जा रही है? इस पर वित्त मन्त्री ने सफाई दी कि पिछले वर्ष सरकार ने इन्हें मात्र 2000 करोड़ रुपए की करों में राहत दी थी तथा इस रकम से अधिक की कर वसूली की थी।

कामरेड चन्दा ने अपना वक्तव्य जारी रखते हुए कहा कि करोड़ों खेत-मजदूरों की निरन्तर बदतर दुर्दशा की ओर गम्भीरता-पूर्वक ध्यान देना होगा। उन्हें पूरा साल काम देने का इन्तजाम करना होगा। उन्हें न्यूनतम मजदूरी देनी होगी तथा एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र व एक राज्य से दूसरे राज्य में मजदूरी दरों में जो असमानता है, उसे दूर करना होगा।

मिलों, कारखानों, दफ्तरों व अन्य स्थानों में काम करने वाली श्रमजीवी जनता के लिये आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएं सस्ते दामों पर उपलब्ध करानी होंगी। इसके लिए आवश्यक सब्सिडी (Subsidy) सरकार दे।

कृषि व औद्योगिक उत्पाद के मूल्यों में समानता लानी होगी। श्रमिक जनता के बच्चों की शिक्षा का इन्तजाम किया जाए। इस

(शेष पृष्ठ 5 पर)

बुर्जुआ जनतंत्र . . .

(पृष्ठ 3 का शेष)

विषय में हम शंका करने का साहस नहीं कर सकते ।

(न्यू मासेज़ पत्रिका—25 अगस्त 1940 का सम्पादकीय)

बुर्जुआ जनतन्त्र ने एक समय विरोधी दलों के महत्व को स्वीकार किया था

इस उदार परंपरा के बुर्जुआ राजनीतिक सिद्धांतकारों ने एक स्वर में माना है कि जनतन्त्र के बारे में आम परिकल्पना यह होनी चाहिए कि वास्तविक वैधानिक प्रभुसत्ता से परे एक अंतिम सामान्य (General) प्रभुसत्ता भी है और यह सबसे बड़ी शक्ति है । यह शक्ति जनता की शक्ति है ।

इस जनमत को सामाजिक-विचार की नैसर्गिक प्रक्रिया को जीवित रखकर ही प्रभावी बनाया जा सकता है, बल प्रयोग द्वारा नहीं । सामाजिक-विचार की यह प्रक्रिया आवश्यक और नैसर्गिक रूप से चर्चा की प्रक्रिया है ।

बुर्जुआ जनतन्त्र के स्वतंत्र प्रतियोगिता के आरंभिक दौर में विभिन्न मतों के बीच चर्चा और बहस को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया था । विपरीत मतों का मिलन, उनका एक दूसरे के संपर्क में आना, इस प्रकार की बहस और चर्चा के माध्यम से उनकी शांतिपूर्ण स्पर्धा को उस समय सर्वोच्च महत्व दिया गया था ।

इस जनतांत्रिक पद्धति की स्वीकृति में ही पार्टी-पद्धति की भूमिका और महत्व की स्वीकृति भी निहित है । बुर्जुआ जनतांत्रिक पद्धति के प्रणेताओं ने स्वीकार किया था कि जनतांत्रिक सरकार के चरित्र के विपरीत, 'साम्राज्यवाद अर्थात् जोशरवाद अथवा तानाशाही का विशिष्ट चरित्र तानाशाह के व्यक्तित्व में नहीं बल्कि शक्ति की एकता में निहित होता है । यदि राज्य की तमाम शक्ति एक संस्था में ही केन्द्रित हो, यदि विचार, कथन और कार्रवाई एक ही व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर हों तो वह सरकार चरम सरकार होगी ।"

(हर्नशॉ-दि गवर्नमेन्ट ऑफ इंग्लैंड)

सरकार की नई आर्थिक व वित्तिय नीतियाँ

एकाधिकारी पूंजी को लूट की खुली छूट

राजीव सरकार बारंबार जिस वित्तीय नीति की घोषणा कर रही है तथा कानून बना रही है, वह इस सरकार की नई आर्थिक रण-नीति का ही एक अंग है । यह सरकार एकाधिकारी वित्तीय पूंजी के हितों की रक्षा करने और उन्हें आगे बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध है । सरकार को इस बात की चिंता नहीं कि देश की अर्थव्यवस्था और आम जनता को इसके लिए कितनी बड़ी कीमत चुकानी पड़ेगी ।

इस दीर्घकालीन वित्त-नीति का सार यही है कि निजि क्षेत्र और विशेषकर एकाधिकारी वित्तीय पूंजी को करों में और भी छूट दी जाए ताकि यह पूंजी अकूत मुनाफा लूटते हुए देश की 'सेवा' कर सके । इस क्षेत्र से अब नाममात्र को कर वसूली की जाएगी । राष्ट्रीय प्रगति और 'विकास' के लिए आवश्यक संसाधन जुटाने की जिम्मेदारी शोषण और उत्पीड़न के बोझ से कराहती आम जनता के कंधों पर डाली जा रही है । पाँच वर्ष की अवधि के लिए आयकर की दरों को स्थिर रख कर, अधिभार (Surcharge) और अधिकर (Surtax) को समाप्त करके तथा उदार कर, आबकारी शुल्क व अन्य करों में और भी रियायतें देकर निजि क्षेत्र पर करों का बोझ और भी कम किया जा रहा है ।

ढोंग ही ढोंग

एक ओर तो राजीव गांधी सरकार संसद के अन्दर और बाहर सातवीं पंचवर्षीय योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 1,18000 करोड़ रु. की विपुल धनराशि वित्तीय संसाधनों के रूप में जुटाने की घर बात उद्घोषित कर रही है; वहीं दूसरी ओर एकाधिकारी पूंजी को करों में हजारों करोड़ रु. की रियायतें देकर, राजस्व की आमदनी के इस स्रोत को बंद कर रही है । यह सरकार परोक्ष व अपरोक्ष करों के बीच असमानता दूर करने का आश्वासन भी दे रही थी, लेकिन इन नीतियों के फलस्वरूप तो यह असमानता और भी बढ़ेगी ही । उदाहरण के लिए 1970-71 की अवधि में परोक्ष करों द्वारा राजस्व की कुल आमदनी 27.2% थी । 1974-75 में यह आमदनी 22.6% रह गई, अर्थात् छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान 4.6% कम राजस्व प्राप्त किया गया । अब जो नीति घोषित की गई है, उसके फलस्वरूप इस स्रोत से होने वाली राजस्व की आय 19% तक नीचे आ सकती । व्यक्तिगत आयकर से प्राप्त राजस्व का अंश, इसी अवधि में घट कर 9% हुआ । इस तरह नीति के लागू होने से पूंजीपति और धनी लोग पहले से भी कम, नाममात्र का ही व्यक्तिगत आय-कर देंगे । इन लोगों को यह भी आश्वासन दिया गया है कि उनकी आय पर पड़ने वाले मुद्रास्फीति के असर को भी सरकार, हर दो-तीन वर्ष बाद आय कर में छूट की सीमा में परिवर्तन करके ध्यान रखेगी । लेकिन आम गरीब आदमी की आमदनी पर पड़ने वाले इसी मुद्रास्फीति के प्रभाव की किसी को चिंता नहीं है । राजीव गांधी सरकार पूंजीपतियों और धनियों को करों में भारी रियायतें देकर ऐसी स्थिति उत्पन्न कर रही है, जहाँ सरकार का पेट भरने की सारी जिम्मेदारी इन्हीं गरीबों, अधभूखे लोगों के कंधों पर ही डाली जाएगी । देश की 'प्रगति' के लिए समस्त संसाधन परोक्ष अथवा अपरोक्ष कर में इन्हीं लोगों को उपलब्ध कराने होंगे । जनता के दुर्हाल किए गए विपुल संसाधनों में से लगभग 75,000 करोड़ रूपया तो केवल मिलिट्री बजट पर ही खर्च किया जाएगा । शेष 43,000 करोड़ रु. में से लगभग आधे से भी अधिक धनराशि शहरी व ग्रामीण पूंजीपतियों को अनुदान (Subsidy) देने व घरेलू बाजार और विदेशों से लिए गए ऋणों का ब्याज अदा करने में खर्च की जाएगी । इसके बाद देश की जनता की कौरी जरूरतों को पूरा करने के लिए बचता ही क्या है ? अतः आने वाले वर्षों में करों का बोझ और भी अधिक होता चला जाएगा, आवश्यक वस्तुओं के दामों में वृद्धि होती चली जाएगी तथा जनता की जरूरतें पूरी नहीं होंगी । सभी बुर्जुआ जनतांत्रिक देशों में और विशेष कर हमारे देश में एक ढोंग चल रहा है । जब भी राष्ट्रीय विकास और प्रगति की बात कही जाती है, तो उसका अर्थ होता है, जनता का शोषण करने वालों का विकास और प्रगति । जहाँ तक देश के लिए बलिदान देने का काम है, उसके लिए उपभुक्त-जनता तो बनता है ही ।

नई आर्थिक नीति

इस वित्तीय नीति के फल स्वरूप आर्थिक क्षेत्र में एक गहन संकट व्याप्त हो गया है । संसाधनों के अभाव में बिजली सप्लाई बढ़ाने व नई रेलवे लाइनों को बिछाने जैसे आवश्यक कार्य तक रुक गए हैं । बेरोजगारी, मूल्य-वृद्धि और विदेशी कर्जों के भुगतान के मामले में भी स्थिति काफी नाजुक है । निजि पूंजी के निवेश में वृद्धि की जिस संभावना का ढोल पीटा जा रहा है, वह भी भ्रम ही साबित होगा । क्योंकि बाजार का संकट घटने के बजाए और भी तीव्र होगा । पूंजी का नौकरशाही रुझान और भी बढ़ेगा तथा अधिक से अधिक पूंजी सट्टेबाजी (Speculation) में लगाई जाएगी । लोगों को चूस कर हासिल किए गए बहुमूल्य वित्तीय संसाधनों को मिलिट्री बजट, उच्च प्रशासन, महंगे ऐश-आरामों, अनुदान (Subsidy) व सहयोग (Subventions) पर नहीं लुटाया जाना चाहिए । यदि यही पैसा नई औद्योगिक इकाइयों को पनपाने तथा आधारभूत क्षेत्र को विकसित करने में खर्च किया जाए तो निश्चय ही लोगों को कुछ राहत मिलेगी । ऐसा करने से उन चीजों का उत्पादन भी देश में ही किया जा सकता है जिनका अभी तक हमें आयात करना पड़ता है, निजी पूंजी को बाजार मिल सकता है तथा मरणासन्न पूंजीवादी व्यवस्था में, जिस सीमा तक भी संभव है, आम लोगों को रोजगार दिया जा सकेगा । इस सब के मिले-जुले प्रभावस्वरूप निजि पूंजी निवेश भी प्रेरित हो सकता है । इसके विपरीत देश के बुर्जुआ शासक अपने 'वोट बैंकों' को सुरक्षित रखने के लिए एकाधिकारियों, व्यापारियों और धनी किसानों को पैसे भरने के लिये तथा उनके अधिकतम लाभ को सुरक्षित रखने के लिए करों में अधिकतम वृद्धि करके आम लोगों की जेबों पर डाका डाल रहे हैं । पिछले कई दशकों से नियोजित विकास के नाम पर सार्वजनिक क्षेत्र के निर्माण के लिए अपार संसाधन एकत्र किए गए हैं । आज भी संसाधन संग्रह चल रहा है । जिन्हें विनियोजन से संसाधन एकत्र किए जा रहे हैं, उन्हीं की भलाई के कामों की पूरी तरह उपेक्षा की जा रही है । 'भलाई करने वाला राज्य' (Welfare State) की धारणा मजाक बनकर रह गई है ।

सबसे अधिक बात की चुनौती है, वह है सरकार द्वारा अत्यन्त निर्लज्जतापूर्वक लोगों के प्रति अपने न्यूनतम दायित्व को भी निभाने से पीछे हटना । निजि एकाधिकारी पूंजी के प्रति इसकी प्रतिबद्धता बढ़ती जा रही है । निजि पूंजी को सड़कें बनाने और विद्युत प्लांट लगाने के लिए कहा जा रहा है । डाक-तार विभाग में भी निजि पूंजी के लिए दरवाजे पद्धति बनाकर रखी गई है । ऐसी भी खबर है कि टेलीफोन विभाग को भी निजि क्षेत्र को सौंपने की बात चल रही है । गुप्त साज-सामान को छोड़ कर मिलिट्री द्वारा उपयोग में लाई जाने वाली अन्य सामग्री बनाने के लिए भी निजि पूंजी को आमन्त्रित किया जा रहा है । परिवहन सेवाएं भी निजि क्षेत्र को सौंपी जा सकती हैं । अब तो भारतीय मुद्रा के सिक्के भी इंग्लैंड, जैनिश, अमरीका और अन्य विदेशी टकसालों में ढल कर आ रहे हैं । यह करिश्मा तो साम्राज्यवादी ब्रिटिश सरकार भी नहीं कर सकी थी । सरकार को बताना पड़ेगा कि क्या देश की टकसालें बंद पड़ी हैं जो भारतीय सिक्के विदेशी टकसालों में क्यों ढलवाए जा रहे हैं ? यही नहीं भारत सरकार ने विश्व बैंक से ऋण लेकर एक ब्रिटिश फर्म को रेल के इंजन बनाने का आर्डर दिया है, जबकि ये इंजन चितरंजन लोकोमोटिव में आसानी से बन सकते थे । भारतीय खाद्य निगम की जनता को आधारित भोजी खाद्यों के बना कर दिया जाता है, यह काम भी अब बड़े व्यापारियों को सौंप दिया गया है । इन व्यापारियों को ठेकेदार के ठेके भी दिये जाते हैं । सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनी 'हिन्दुस्तान एल्यूमिनियम' की भवन निर्माण करने की भूमिका को नकार कर यह काम प्राइवेट इंजीनियरिंग फर्मों को दिया जा रहा है । यह भी सुनना है कि हिन्दुस्-

(शेष पृष्ठ आठ पर)

सुकिन्दा के किसान, मजदूरों की ऐतिहासिक पदयात्रा

सुकिन्दा (उड़ीसा), 25 जनवरी। एस॰यू॰सी॰आई॰ की क्रांति पताका आज देश के कोने-कोने में फहरा रही है और देश की शोषित-पीड़ित जनता का आह्वान कर रही है कि वह हर प्रकार के पूंजीवादी शोषण, उत्पीड़न और अत्याचार के विरोध में उच्च नीति-नैतिकता और संस्कृति के आधार पर सशक्त एकजुट जनवादी आन्दोलन का निर्माण करते हुए अपनी मुक्ति की मंजिल की दिशा में आगे बढ़ें। इस आह्वान की प्रतिध्वनि सुनकर देश का सर्वाधिक शोषित उत्पीड़ित तबका आज अपने आपको संगठित कर रहा है। वह अनुभव कर सकता है कि सर्वहारा के महान नेता कामरेड शिवदास घोष की अमूल्य शिक्षाओं का प्रकाश व देश की एकमात्र क्रांतिकारी पार्टी एस॰यू॰सी॰आई॰ का सजीव नेतृत्व पाकर वह शक्तिशाली होता जा रहा है। यदि देश का शोषित वर्ग अपनी शक्ति को पहचान ले तो उसके लिये कोई भी मंजिल पा लेना दुश्वार नहीं।

उड़ीसा प्रांत स्थित सुकिन्दा क्षेत्र के 5000 से भी अधिक बहादुर किसान और मजदूर जब 21 जनवरी को एस॰यू॰सी॰आई॰ के झंडे तले एकत्र हुए और अपने ऊपर नित चलने वाले शोषण, उत्पीड़न व अन्याय के विरोध में सारे लगाते 160 किलोमीटर की ऐतिहासिक पदयात्रा पर निकल पड़े। उनका गंतव्य था प्रांतीय राजधानी भुवनेश्वर। नेतृत्व कर रहे थे, कामरेड शिवदास घोष की शिक्षाओं से अनुप्राणित, सुप्रसिद्ध श्रमिक नेता कामरेड मायाधर नायक। सुकिन्दा खदान क्षेत्र के काम से निकाले गए मजदूरों, कामाख्यानगर, हरिन्दपुर के किसानों, मजदूरों, व गरीब आदिवासियों सहित बूढ़ों, बालकों व महिलाओं ने भी इस ऐतिहासिक पदयात्रा में भाग लिया।

सुकिन्दा खदान इलाके के तिन खदान मजदूरों के परिवारों का जीवन मशीनीकरण के कारण काम से निकाले जाने पर खतरे में पड़ गया था, जिन गरीब किसानों और आदिवासियों के लिए जमीनें छिन जाने का भय उत्पन्न हो गया था, वे सब मिलकर एक व्यक्ति की तरह दृढ़तापूर्वक खड़े हो गए थे। अपनी इस पदयात्रा के दौरान वे अपनी मांगों के समर्थन में व्यापक जनमत तैयार करना चाहते थे, ताकि उनकी न्यायसंगत मांगों को केन्द्र करके एक व्यापक और दीर्घकालीन आन्दोलन खड़ा किया जा सके। वे मांग कर रहे हैं कि सभी बेरोजगारों को रोजगार दिया जाए, खदानों से मशीनों को हटाया जाए तथा काम से निकाले गए सभी श्रमिकों को पुनः रोजगार दिया जाए, प्रस्तावित हैवरी स्कीम प्लांट का निर्माण किया जाए तथा गरीब किसानों व आदिवासियों को उनकी उपजाऊ जमीन से बेदखल करने की योजना को तुरन्त समाप्त किया जाए।

पदयात्रा लगातार चार दिनों तक चलती रही। रास्ते में स्थान स्थान पर हजारों ग्रामवासियों ने पदयात्रियों का अभिनन्दन किया। 21 जनवरी की शाम जाजपुर रोड 22 जनवरी की शाम धर्मशाला तथा 23 जनवरी की शाम को कटक में जनसभाएं की गई। हजारों स्थानीय लोगों और नवयुवकों ने इन जनसभाओं में उत्साहपूर्वक भाग लिया तथा पदयात्रियों के प्रति सहयोग और अपनी एकजुटता प्रदर्शित की।

24 जनवरी को पदयात्री भुवनेश्वर पहुंचे। वहां उनका अभूतपूर्व स्वागत हुआ। तत्पश्चात स्थानीय परेड ग्राउंड में एस॰यू॰सी॰आई॰ के विधायक कामरेड शंभूनाथ की अध्यक्षता में एक विशाल जनसभा का आयोजन किया गया। सुप्रसिद्ध श्रमिक नेता एस॰यू॰सी॰आई॰ उड़ीसा राज्य कमेटी के सचिव कामरेड तापसदत्ता ने मुख्य वक्तव्य रखा। उन्होंने कहा कि पूंजीवाद ही जनजीवन की सभी समस्याओं की जड़ है। जब तक पूंजीवादी व्यवस्था रहेगी इन समस्याओं का समाधान नहीं हो सकता। सही नेतृत्व में चलने वाले, सटीक राजनीतिक लाइन पर आधारित सशक्त जनवादी आन्दोलन के द्वारा सरकार पर दबाव डाला जा सकता है, तथा इसी प्रक्रिया में एक दिन पूंजीवादी राजसत्ता को उखाड़ फेंक कर मजदूर वर्ग के नेतृत्व में समाजवाद की स्थापना की जा सकती है उन्होंने कहा कि यह पदयात्रा अन्त नहीं है, बल्कि एस॰यू॰सी॰आई॰ के नेतृत्व में उत्पीड़ित लोगों द्वारा अपने ऊपर लिये गए ऐतिहासिक कार्य भार की एक कड़ी है। कामरेड शंभूनाथ व कामरेड मायाधर नायक ने भी अपने वक्तव्य रखे। सभा आरंभ होने से पहले कामरेड मायाधर नायक के नेतृत्व में पदयात्रियों के एक प्रतिनिधिमंडल ने उड़ीसा के राज्यपाल को अपनी मांगों पर आधारित एक ज्ञापन पेश किया। राज्यपाल ने ज्ञापन लेते हुए प्रतिनिधिमंडल को आश्वासन दिया कि ज्ञापन में दर्ज मांगों पर ध्यान दिया जाएगा।

भुवनेश्वर की ओर

लूट की छूट (पृष्ठ 7 का शेष)

लाभ कमाऊ क्षेत्र को निजी पूंजी के हाथों बेच दिया जाएगा। इस प्रकार सरकार गरीब आदमियों से एकत्र किए गए पैसे से निर्मित सार्वजनिक क्षेत्र की फर्मों का दिवाला निकाल कर अब 'दक्षता' (Efficiency) के नाम पर जनता की सम्पदा को निजि क्षेत्र के हवाले कर देना चाहती है। मानो निजि क्षेत्र भ्रष्टाचार और अक्षमता से मुक्त है।

हम सार्वजनिक क्षेत्र की वकालत नहीं कर रहे हैं। चाहे इस अर्थव्यवस्था को 'मिश्रित कहें या और कोई नाम दें, मूलभूत आर्थिक नियम अपरिवर्तित ही रहता है। दोनों क्षेत्रों में ही पूंजीवादी उत्पादन संबंध और पूंजीवादी उत्पादन की एक सी ही प्रेरक शक्ति कार्य करती है। जिस सरकार ने नियोजित विकास के नाम पर कई दशकों तक सार्वजनिक क्षेत्र का निर्माण किया हो और वास्तव में इस क्षेत्र का निर्माण एकाधिकारी पूंजी के लिए मूलभूत ढांचे के रूप में किया हो तथा निजी पूंजी, भ्रष्ट अधिकारी वर्ग, समाज विरोधी तत्वों के घृणित गठजोड़ को तोड़ने का प्रयास तक न किया हो; उस सरकार को घाटे और भ्रष्टाचार की बात करने का कोई नैतिक अधिकार नहीं।

कहने का तात्पर्य है कि सार्वजनिक क्षेत्र के खिलाफ, इसे बदनाम करने के लिये प्रचार चलाया जा रहा है। ऐसा प्रचार न्यायपालिका और यहां तक कि संसद के विरुद्ध भी चलाया जा रहा है। इस प्रकार एकाधिकारी पूंजी के दलाल, लोगों के मन में यह बैठाना चाहते हैं कि जो कुछ 'निजि' है, वह उत्तम और भला है, तथा जो कुछ सार्वजनिक है वह घटिया, अक्षम और भ्रष्ट है। उद्देश्य एकदम स्पष्ट है, जनता के पैसे से पाले-पोसे गए सार्वजनिक क्षेत्र की सभी मुनाफा वाली इकाइयों को निजि एकाधिकारी पूंजी के हाथों में सौंप देने के लिये भूमिका तैयार की जा रही है। आज देश में 39,000 से भी अधिक औद्योगिक इकाइयां रुग्ण हैं, वह भी बैंकों का 15,000 करोड़ रुपया डकारने के बाद। ये सभी इकाइयां निजि क्षेत्र में थी। अब सरकार ने घोषणा की है कि वह कुछ ही रुग्ण कंपनियों का अधिग्रहण करेगी। बाकी कंपनियों को एकाधिकारी पूंजी के साथ अपना विलय कर लेना होगा। इस प्रकार बेरोजगारी की भयंकर परिस्थिति और भी विषम हो जाएगी। यह एकाधिकारी पूंजी को लाभदायक ढंग से विस्तार करना नहीं तो और क्या है, और वह भी जनता के पैसे के बल पर।

इससे इस बात का स्पष्ट संकेत मिलता है कि राज्य (State) एकाधिकारी पूंजी का सेवक बनता जा रहा है। यह फासीवाद का एक लक्षण है। हम अनैतिक आचरण के पक्षधर नहीं है। लेकिन सामाजिक दायित्व के बिना अधिकार की बात सोची भी नहीं जा सकती। लेकिन यह कैसा न्याय है कि सरकार छोटे मोटे अपराधों के लिए कर्मचारियों को दोषी ठहराती है, लेकिन बड़े अधिकारियों और यहां तक कि मंत्रियों तक के अपराधों के प्रति आंखें मूंदे रहती है।

सार्वजनिक क्षेत्र की गतिविधियों से जो लोग असन्तुष्ट हैं, उन्हें असली मुद्दे को ध्यान में रखना चाहिए। उन्हें भ्रष्टाचार, अक्षमता और कुप्रबन्ध समाप्त करने के लिए आवाज उठानी चाहिए लेकिन साथ ही साथ चौकस भी रहना चाहिए कि कहीं सरकार को कर्मचारियों को मनमाने ढंग से नौकरी से निकालने, कहीं पर रोक लगाने तथा काम की कमर करने वाली मशीनों को लगाने का बहाना न मिल जाए। उन्हें सरकार द्वारा देशी और विदेशी एकाधिकारी विशाल पूंजी को दी गई लूट की खुली छूट का सशक्त प्रतिरोध करना चाहिये।

सोशलिस्ट यूनिटी सेन्टर आफ इंडिया (एस.यू.सी.आई.) की ओर से कामरेड प्राणसिंह द्वारा 4/11772 कर्मीर बाग, दिल्ली - 6 से सम्पादित व प्रकाशित तथा सोनकी प्रिंटर्स, बी-2633 मेन बस स्टैंड, शिवपुर, दिल्ली - 35 से मुद्रित